अमृत वाणी

मनुष्य के दुखी होने की वजह खुद की गलतिया ही है, जो मनुष्य अपनी गलतियों पर काबू पा सकता है वही मनुष्य सच्चे सुख की प्राप्ति भी कर सकता है।

-भगवान महावीर,

एंटीबायोटिक से मौत के भयावह आंकड़े

जैसा कि बताया गया है दुनिया भर में एंटीबायोटिक दवाओं के उपयोग के कारण 7 लाख से अधिक लोगों की मौत हो जाती है। दरअसल एंटीबायोटिक क्रमशः एक बहु प्रचलित दवा का स्वरूप लेता जा रहा है। लोग स्वास्थ्य संबंधी छोटी-छोटी शिकायतों पर बिना किसी हिचकिचाहट के एंटीबायोटिक ले लेते है। यही वजह है कि उसके चलन में पिछले कुछ वर्षों में काफी वृद्धि हुई है।

वस्तुतः कमजोर और अशिक्षित वर्ग में एंटीबायोटिक का सर्वाधिक चलन है। इसके कई वजह भी है। पहला तो यह कि अपनी अज्ञानता और अशिक्षा के कारण वे उसके घातक प्रभावों के बारे में नहीं जानते। दूसरी बात जो उनके लिए अधिक महत्वपूर्ण है वह यह कि एंटीबायोटिक के द्वारा सामयिक राहत से वे चिकित्सकों या अस्पताल का दरवाजा खटखटाने से बचने की कोशिश करते है। ये वर्ग अधिकतर काम काजी वर्ग होता है न तो इनके पास अस्पताल में इलाज के लिए आवश्यक समय होता है और न डॉक्टरों के क्लीनिकों में जाने लायक पैसा और तीसरी बात एंटीबायोटिक लेकर वे त्वरित राहत पाना चाहते हैं। इसलिए जब भी कोई परेशानी हो वे बड़ी आसानी से मेडीकल स्टोर से मांगकर एंटीबायोटिक खा लेते है। उनकी नींद तो तब खुलती है जब लंबे समय तक एंटीबायोटिक खाने का असर उनमें किसी गंभीर बीमारी के रूप में प्रकट होने लगता है।

ऐसा भी नहीं कि पढ़े लिखे लोग एंटीबायोटिक का उपयोग नहीं करते किसी किसी को तो लत सी होती है। यहां तक कि उसके दुष्प्रभाव को जानते हुए भी केवल तात्कालिक राहत के लिए एंटीबायोटिक ले लेते है। वहीं दूसरी ओर कुछ लोग एंटीबायोटिक को लेकर गलत धारना भी पालते हैं। उन्हें लगता है कि कुछ बीमारियों का इलाज एंटीबायोटिक से संभव है, जो होता नहीं है।

कुल मिलाकर यही कहा जा सकता है कि बीमारी का बोझ सार्वजनिक स्वास्थ्य सुविधाओं का अभाव, सस्ती एंटीबायोटिक दवाइयां, कमजोर आर्थिक स्थिति, अशिक्षा आदि मुख्य कारक है जिसके कारण एंटीबायोटिक दवाओं का प्रचलन क्रमशः बढ़ता जा रहा है। वही दूसरी ओर एरना इंटरनेशनल ने एंटीबायोटिक दवाओं के हानि कारक प्रभावों पर प्रकाश डालते हुए जिस तरह इस पर तत्काल कार्यवाही किए जाने के प्रति सचेत किया है उस पर गौर किए जाने की जरूरत है। लोगों को इस दिशा में यथा संभव जागरूक कर कुछ हद तक इस पर नियंत्रण किया जाना संभव हो सकता है।

लोकपाल का इंतजार

दरअसल 2014 के आमचुनाव के बाद लोकसभा का जो गणित बना है, उसमें किसी भी दल के पास विपक्षी दल की हैसियत नहीं है। विपक्षी दल नहीं है, इसलिए विपक्ष का नेता भी नहीं है। हालांकि कांग्रेस 44 सदस्यों के साथ लोकसभा में सबसे बड़ा विपक्षीय दल है, पर सदन में उसी पार्टी का नेता प्रतिपक्ष बनता है, जिसके लोकसभा के कुल सदस्यों की संख्या कम से कम 10 प्रतिशत हो। वर्तमान में किसी भी विपक्षी पार्टी के सदस्यों की संख्या 10 प्रतिशत नहीं है, लिहाजा कांग्रेस के नेता मल्लिकार्जुन खड़गे को लोकसभा अध्यक्ष ने प्रतिपक्ष का नेता मानने की कांग्रेस की अपील खारिज कर दी थी। हालांकि न्यायालय ने पिछले साल दिए फैसले में स्पष्ट कर दिया था कि संसद में सबसे बड़ी विपक्षी पार्टी का नेता ही, नेता प्रतिपक्ष कहलाएगा। बावजूद केंद्र सरकार विधेयक में प्रस्तावित कुछ संशोधनों को संसद से पारित कराने का बहाना करके लोकपाल की नियुक्ति को टालती चली आ रही है। लेकिन अब न्यायमूर्ति रंजन गोगोई और आरण् भानुमति की पीठ ने निर्देश दिया है कि प्रस्तावित संशोधनों को संसद में पारित होने तक लोकपाल कानून को निलंबित रखना न्यायोचित नहीं है।

दरअसल लोकसभा में लोकपाल संशोधन विधेयक.2013 लंबित है। यह विधेयक जब लाया गया था तब भाजपा ने दोनों सदनों में भरपूर समर्थन दिया था, किंतु अब तकनीकि पेंच डालकर मोदी सरकार इस विधेयक को पिछले चार साल से टाल रही है। एक.दो नहीं मूल विधेयक के प्रारूप में 20 संशोधन प्रस्तावित कर दिए हैं। इस कारण विपक्षी दल इसे पारित करने में सहमत नहीं है। वैसे मोदी सरकार भ्रष्टाचार और काले धन को खत्म करने की बात चिल्ला.चिल्ला कर करती है, पर इन चार सालों में उसकी ऐसी एक भी कोशिश नहीं है, जिसे गंभीर माना जाए। यह तथ्य इस बात की याद दिलाता है कि जब नरेंद्र मोदी गुजरात में मुख्यमंत्री थे, तो उन्होंने अपने कार्यकाल में लोकायुक्त की नियुक्ति नहीं होने दी थी। इस कारण यह संदेह होता है कि मोदी गुजरात का रवैया केंद्र में भी दोहरा रहे है। यह टालमटूली प्रजातंत्रिक हितों के लिए उचित नहीं कही जा सकती है।

गांधी जी ने कहा था कि ष्सच्चा स्वराज थोड़े से लोगों द्वारा सत्ता हासिल कर लेने से नहीं, बल्कि जब सत्ता का दुरुपयोग हो, तब सब लोगों द्वारा उसका प्रतिकार करने की क्षमता जगा कर ही प्राप्त किया जा सकता है।ष् इस नजरिए से राजकाज में बदलाव लाने का यह सक्रिय हस्तक्षेप और इसकी प्रासंगिकता दोहराई जाती रहनी चाहिए। जिससे इस प्रक्रिया के माध्यम से भारतीय लोकतंत्र ने जो उपलब्धि हासिल की है, उसकी निरंतरता बनी रहे। क्योंकि भ्रष्टाचार की व्यापकता और उसकी स्वीकार्यता की महिमा जिस अनुपात में समाज में व्याप्त हो चुकी है, उसका निर्मूलन हालांकि इस अकेले कानून से संभव नहीं है, लेकिन लोकपाल अस्तित्व में आना चाहिए। इससे संबद्ध जो पूरक विधेयक लंबित हैं, उनके प्रारुप को भी वैधानिक दर्जा मिलना जरुरी है। तभी, लोकपाल जैसे सशक्त प्रहरी की वास्तविक सार्थकता सामने आएगी।

लोकसेवकों की कार्यप्रणाली में पारदर्शिता और उत्तरदायित्व के समावेश भी परिलक्षित होंगे। अगर विपक्ष या सामाजिक कार्यकर्ताओं द्वारा जन हस्तक्षेप कालांतर में जारी नहीं रहता है तो लोकपाल जनता की जागी उम्मीदों पर खरा उतरने वाला नहीं है। केंद्र सरकार की लोकपाल के बाबत शिथिलता के चलते लग रहा है कि संसद में किसी एक दल को असाधारण बहुमत मिलना लोकपाल के मार्ग में बड़ी बाधा है, क्योंकि ऐसे में कोई विपक्षी पार्टी नेता प्रतिपक्ष के पद की अधिकारी नहीं रह जाती। जबकि सच्चाई यह है कि ऐसी ही स्थिति में लोकपाल की अधिक जरूरत है, जिससे लोकसेवक भय का अनुभव करते रहें। हमारे देश में 1963 में पहली बार लोकपाल की अवधारणा सामने आई थी। लेकिन 55 साल में भी फलीभूत नहीं हो पाई।

स्वतंत्र भारत में भ्रष्टाचार का सुरसामुख लगातार फैल रहा है। इसने सरकारी विभागों से लेकर सामाजिक सरोकारों से जुड़ी सभी संस्थाओं को अपनी चपेट में ले लिया है। शिक्षा और स्वास्थ्य जैसी मानवीय मूल्यों से जुड़ी संस्थाएं भी अछूती नहीं रहीं घ् नौकरशाही को तो छोड़िए, देश व लोकतंत्र की सर्वोच्च संस्था संसद की संवैधानिक गरिमा बनाए रखने वाले सांसद भी सवाल पूछने और चिट्ठी लिखने के ऐवज में रिश्वत लेने से नहीं हिचकिचाते। जाहिर है, भ्रष्टाचार लोकसेवकों के जीवन का एक तथ्य मात्र नहीं, बल्कि शिष्टाचार के मिथक में बदल गया है। जनतंत्र में भ्रष्टाचार की मिथकीय प्रतिष्ठा उसकी हकीकत में उपस्थिति से कहीं ज्यादा घातक इसलिए है, क्योंकि मिथ हमारे लोक.व्यवहार में आदर्श स्थिति के नायक.प्रतिनायक बन जाते हैं। राजनीतिक व प्रशासनिक संस्कृति का ऐसा क्षरण राष्ट्र को पतन की ओर ही ले जाएगा घ्

> **लोकपाल की नियुक्ति में हीला.हवाली के चलते सर्वोच्च न्यायालय ने केंद्र सरकार को समयब प्रगति की जानकारी 10 दिन के भीतर शपथ.पत्र के जरिए देने को कहा है। दरअसल साढ़े चार साल पहले लोकपाल कानून बन जाने के बावजूद लोकपाल की नियुक्ति नहीं हो पा रही है। नियुक्ति नहीं हो पाने की पृष्ठभूमि में वर्तमान लोकसभा में विपक्ष के नेता का नहीं होने का तर्क केंद्र सरकार अदालत को दे रही है। लोकपाल नियुक्ति की जो प्रक्रिया है उसमें विपक्ष के नेता को भी एक सदस्य के रूप में शामिल किया जाना है।**

इसीलिए साफ दिखाई दे रहा है कि सत्ता पक्ष की गड़बड़ियों पर सवाल उठाना, संसदीय विपक्ष के बूते से बाहर होता जा रहा है। विडंबना यह है कि जनहित से जुड़े सरोकारों के मुद्रदों को सामने लाने का काम न्यायपालिका को करना पड़ रहा है।

राजनीतिक संस्कृति के इस क्षरण और पतन को रोकने का पहला दायित्व तो उस विधायिका का था, जो रामलीला मैदान में अन्ना आंदोलन के चरम उत्कर्ष पर पहुंचने के दौरान, संसद की सर्वोच्चता और गरिमा का स्वांग तो रच रही थी, लेकिन जनता को दोषमुक्त शासन.प्रणाली देने की दृष्टि से एक कदम भी कानूनी प्रक्रिया को आगे नहीं बढ़ा रही थी। इसमें कोई दोराय नहीं कि संविधान के अनुसार संसद हमारे राष्ट्र की सर्वोच्च विधायी शक्ति व संस्था है। लोकतांत्रिक राजनीतिक संरचना में उसी का महत्व सर्वोपरि है। लेकिन जिस तरह से वह व्यापक व समावेशी भूमिका निर्वहन में गौण होती चली जा रही है, उस परिप्रेक्ष्य में उसकी कार्य संस्कृति का प्रदूषित होते जाना तो था ही, जन सरोकारों से आंखे मूंद लेना भी था। संसद की गरिमा को क्षत.विक्षत करने का काम विधायिका में स्थापित होती जा रही व्यक्ति केंद्रित राजनीतिक शैली ने भी किया है। राजनेताओं की उम्मीदवारी का निर्धारण उसकी आर्थिक व जातीय हैसियत से किए जाने के कारण भी, इस जनतांत्रिक व्यवस्था का क्षय हुआ है। राजनीति में अर्थ की महत्ता ने नैतिक सरोकारों को हाशिये पर खदेड़ दिया। संविधान निर्माताओं ने समता व न्याय पर आधारित और मानवीय गरिमा से प्रेरित भारतीय संप्रभुता के जो आदर्श रचे थे, उसकी अवहेलना इसी विधायिका ने की। संविधान.सम्मत कोई भी व्यवस्था कितनी भी श्रेष्ठ क्यों न हो, उसकी स्वीकार्यता तभी संभव होती है, जब देश की जनता का बहुमत उसके साथ हो। डॉण् भीमराव आंबेडकर ने 25 नवंबर 1949 को संविधान सभा की बैठक में कहा था,संविधान का कार्य पूर्णतरू संविधान की प्रकृति पर निर्भर नहीं करता। संविधान सिर्फ विधायिका, कार्यपालिका तथा न्यायपालिका को शक्ति देता है। राज्य के इन स्तंभों की क्रियात्मकता जिन कारकों पर अवलंबित है, वे हैं जनता.जनार्दन और राजनीतिक दल। उनकी आकांक्षाएं और राजनीति ही मुख्य निर्धारक आधार बिंदु हैं। जनता और दलों के भावी व्यवहार के बारे में कौन सटीक आकलन कर सकता है ष्ण् डॉण् आम्बेडकर की आशंका सही साबित हुई। कालांतर में हमारे राजनीतिकों के व्यक्तित्व से सैद्धांतिक व्यवहार और आमजन के प्रति विश्वास दुर्लभ तत्व हो गए हैं।

राजनीति परिणाममूलक रहे, इसके लिए जरुरी है कि राजनीतिक और प्रशासनिक व्यवस्था लोक की निगरानी में रहें। जरुरत पड़ने पर आंदोलित भी होते रहें। इसी के समानांतर विधायिका और कार्यपालिका का दायित्व बनता है कि जनतंत्र से उपजने वाली असहमतियों का वह सम्मान करे और उसके अनुरुप चले। क्योंकि भारतीय प्रजातंत्र में अब तक बड़े समुदायों को लोकतंत्रिक प्रक्रियाओं से जुदा रखा गया है। कानून बनाने में उनकी सलाह या साझेदारी को स्वीकार नहीं किया गया। लिहाजा कानूनों को जन समूदायों पर ऊपर से थोप दिया जाता है। पंचायती राज प्रणाली का भी यही हश्र हुआ। कुछ ऐसी ही वजहें रहीं कि लोकतंत्र का सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ संविधान और सर्वोच्च संस्था संसदष वास्तविक व्यवहार में जनता से दूरी बनाते चले गए और इनसे प्रदत्त अधिकार विशेषाधिकार प्राप्त सांसदों व विधायकों में सिमटते चले गए। बहरहाल लोकपाल की नियुक्ति का रास्ता साफकर न्यायालय ने लोकतांत्रिक व्यवस्था के हित में बड़ा काम किया है।

प्रमोद भार्गव

(ये लेखक के अपने विचार है)

किसानों को एतिहासिक राहत

देश के करोड़ों किसानों को फायदा पहुंचाने के लिए सरकार ने अनाज की 14 फसलों के न्यूनतम समर्थन मूल्य घोषित किए हैं अर्थात सरकार उन अनाजों को अपने घोषित दामों पर खरीद लेगी ताकि किसानों को घाटा न हो। सरकार की घोषणा के मुताबिक किसान को उसकी उपज की लागत से डेढ़ गुना मूल्य सरकार देगी। उन्हें डेढ़ गुना मूल्य मिले, ऐसी सलाह स्वामीनाथन आयोग ने दी थी लेकिन यहां एक पेंच है। उस आयोग ने फसल का लागत मूल्य तय करने में किसान की ज़मीन का किराया भी जोड़ा था याने फसल उगाने में आप खुदाई, बीज, सिंचाई, खाद, दवा, बिजली, मजदूरी आदि का खर्च तो जोड़ रहे हैं लेकिन जिस जमीन पर यह सब होना है, उसका खर्च कैसे छोड़ सकते हैं घ् यदि जमीन का खर्च भी सरकार जोड़ लेती तो उसका अभी जो डेढ़ गुना दाम है, वह पौने दो गुना या दोगुना हो जाता। इसी तर्क के आधार पर कांग्रेस आदि पार्टी का कहना है कि भाजपा सरकार का यह डेढ़ गुना समर्थन मूल्य एक ढकोसला है। कारखानों में बनी चीजों का लागत मूल्य निर्धारित करते समय कारखाने की जमीन का खर्च क्या हम नहीं जोड़ते हैं घ् इस दृष्टि से किसानों को अतिरिक्त लाभ दिया जा सकता है लेकिन इस समय की गई इस घोषणा से भी किसानों को काफी राहत मिलेगी। धान, ज्वार और मक्का जैसे अनाजों की लागत का डेढ़ा मूल्य किसानों को मिलेगा ही लेकिन बाजरे पर 97 प्रतिशत, उड़द पर 62 प्रतिशत और अरहर पर उन्हें 65 प्रतिशत फायदा मिलेगा। इस बढ़ोतरी से सरकार पर 15 हजार करोड़ रुण् का नया बोझ पड़ेगा। करोड़ों किसानों पर 15 हजार करोड़ के खर्च और दर्जनभर धन्नासेठों पर लाखों करोड़ रुण् डुबो देने में कोई फर्क है या नहीं घ् किसानों को दी गई यह राहत सराहनीय है लेकिन यदि उनकी उपज के दाम बाजार में 10 से 50 प्रतिशत तक गिर गए, जैसा कि होता ही रहता है तो सरकार क्या करेगी क्या वह उनकी सारी फसलें खरीद सकेगी सरकार के पास ऐसा कोई इंतजाम नहीं है। सरकारी खरीद धान और गेहूं तक सीमित है। आलू, प्याज और टमाटर इस साल कौड़ियों के मोल बिकते दिखे हैं। किसानों को उनकी उपज का डेढ़ गुना दाम वाकई मिल जाए तो यह एक एतिहासिक घटना होगी। जो भी हो, देश के करोड़ों किसानों को इस घोषणा से थोड़ा.बहुत लाभ तो मिलेगा ही मिलेगा।

डॉ. वेदप्रताप वैदिक

(ये लेखक के अपने विचार है)

आत्म हत्या
अर्थात जोश में होश खोना

वर्तमान में शिशु जन्मजात कुशाग्र बुद्धि के पैदा हो रहे हैं और पैदा होने के बाद चूँकि वे शिशु जीवन की शुरुआत से ही मोबाइल एटीवी कार एसी फ्रिज आदि आधुनिक उपकरणों को देखते ही उनसे अभयस्त हो जाते हैं और संभवतः 6 माह का शिशु टी वी का रिमोट और मोबाइल खेलने में दिलचस्पी लेना शुरू कर देता हैं और आप उससे मोबाइल और टी वी का रिमोट जबरदस्ती नहीं छुड़ा सकते हैं इसके बाद माँ बाप अपने घरेलु काम निपटने के किये टी वी पर बच्चों के सीरियल दिखाना शुरू करते हैं और वर्तमान में तो खाना खिलाना टी वी या मोबाइल के माध्यम से होने लगा ण्जब तक इनकी आवाज या पिक्चर नहीं देखते तब तक उनका खाना नहीं होता! इस प्रकार उन शिशुओं को एक प्रकार की लत ध्व्यसन ध्आदत ध्बन जाती हैं और इसके बाद वे बच्चे उन सीरियल्स को देखकर मनमानी करना सीखते हैं एउस अनुसार बातचीत करना ,डांस करना उनके कोमल मन को प्रभावित करते हैं।

यह प्रक्रिया बहुत अप्रत्यक्ष तरीके से कोमल मन को प्रभावित करती हैं और वे अनजाने में इनके वशीभूत होकर अपनी दुनिया में खोने लगते हैं ण्इस दौर में माँ बाप बहुत प्रसन्नता का अनुभव करते हैं की हमारा बालक या बालिका बहुत सीधा या सीधी हैं ,बिलकुल तंग नहीं करते और वे अपने में व्यस्त रहते हैं यह धीमा जहर उनके मन मस्तिष्क को प्रभावित करता हैं और वे इसके व्यसनी हो जाते हैं स्कूल से आने के बाद ड्रेस ,जूता बाद में उतारते हैं उसके पहले उनको रिमोट की तलाश रहती हैं और यदि माँ बाप दोनों नौकरी पेशा वाले होतो तो सोने में सुहागा!

जब भी आप उनको पढ़ने लिखने या घरेलु काम को बोले तो वे सबसे पहले टी वी तरफ देखते हुए आपकी बात को भूल जाते हैं या कुछ और देखने के लिए रुक जाते हैं अब तो होम वर्क भी जब तक टी वी न चले नहीं करते या आवाज को बंद कर तस्वीर देखते हुए हुए करते हैं, इससे उनकी सोच समझने की क्रिया खतम हो जा रही हैं ,उनकी सोच सीरियल से प्रभावित हो रही हैं और उन्हें मोबाइल चलाना आ जाने से परिवार जन अति गौरव महसूस करते हैं की हमारा बालक इतनी कम उम्र में ये ये कर लेता हैं ,डांस करता हैं ,गाना गाता हैं ण्इसके सुफल परिणाम ये भी हैं की वह इन माध्यमों से रचनात्मककार्य भी करता और सीखता हैं पर वह काल्पनिक दुनिया में अधिक रहता हैं ,वास्तविकता से दूर होता जा रहा हैं ण्यह स्थिति कमोबेश हर परिवार ,वर्ग की हैं ,यह समदर्शी हैं ,सर्वव्यापी हैं > जन्म से जो बीजा रोपण हुआ हैं वह जब वृक्ष बन जाता हैं या बनने लगता हैं तब उसमे फूल की सुगंध अच्छी लगती हैं पर जब फल अप्रिय होने लगता हैं तब हम दुखी ध्चिंतित होने लगते हैं ण्क्या इस समय हम विलम्ब नहीं कर गए वे बच्चे समय से पूर्व जानकार ध्ज्ञानवान ध्समझदार होने लगते हैं आज कल इसी के कारण उनको न समाचार पत्र, पत्रिका ,पुस्तकों से प्रेम हैं और न पढ़ना चाहते हैं ण्बहुत मजेदार बात यह हैं की हमारे बच्चे कान्वेंट संस्कृति के पोषक होने से वे न अंग्रेजी समझते हैं और न हिंदी जानते हैं ण्अधकचरे ज्ञान के धनी हैं ,न हिंदी का मर्म जानते और न अंग्रेजी का उपयोग ण्कोई हिंदी पत्रिका पढ़ना नहीं चाहते और न अंग्रेजी किताब ठीक से समझ पाते हैं। इसके बाद इंग्लिश मीडियम के कारण वे अंग्रेजी भाषा में पढाई करते हैं और समझते हैं हिंदी में ण्इसके अलावा उनका परिवेश ,परिजन में तो मातृ भाषा का ही उपयोग होता हैं ण्ये बच्चे काल्पनिक दुनिया में जीते हैं और क्रमशः स्कूल ,कॉलेज और व्यावहारिक दुनिया में जो उनकी नींव पड़ी थी उसी को आधार बनाकर जीते हैं। उनको न धार्मिक संस्कार मिलते न पारिवारिक न सामाजिक और बहुत कुछ आर्थिक सम्पन्नता के कारण उनकी सोच सिनेमा ,सीरियल और सोशल मीडिया पर आश्रित हो जाती हैं और वे भटकाव में उलझ जाते हैं शुरुआत में मोबाइल और इंटरनेट का प्रयोग बहुत लाभकारी लगा और हुआ और हैं भी ण्विश्व हमारी मुट्ठी में आ गया और हम स्वयं से दूर हो गए हम कल्पना लोक में जीने लगे ,फेस बुक ,व्हाटअप्प्स ब्लॉगर ,ट्विटर से बहुत से जुड़ गए और अपनों से दूर हो गए इसने समय को बर्बाद किया और सोच को निम्म स्तरीय बनाया ण्आज इसके दुष्परिणामों से बहुत दुखद वातावरण बनता जा रहा हैं या बन गया ण्पूरा समाज इस मोबाइल से जुड़ा हुआ हैं ,और न होने पर खुद का ना होने का अहसास कराता हैं

इसके माध्यम से जानकारी ,सूचना शीघ्र मिल जाती हैं और इसके माध्यम से गलत ध्आपत्तिजनक जानकारी शीघ्र फैल जाती हैं जिसके दुष्परिणाम भी देखने मिल रहे हैं ण्आज युवा पीढ़ी किताबी ज्ञान और अनुभव से दूर होकर कल्पनालोक में घूम रहा हैं। उसे शिक्षाप्रद जानकारी समय की बर्बादी लगती हैं ण्और उनको जो मिल रही हैं वह बहुत घातक हैं। कल ही राजधानी में जो घटनाएं हो रही हैं चाहे हत्या ,चोरी ,बलात्कार ,आत्महत्या उनमे मोबाइल टीवी सिनेमा और वर्तमान साहित्य ,खान पान और व्यवहारिक धरातल की अनुभव की कमी के कारण फिल्मीकरण जैसे पिस्तौल से आत्महत्या करली या पत्नी के वियोग में जहरीला पदार्थ खा कर खुदकुशी करली ण्इसमें सिर्फ भावात्मक जुड़ाव होने से विवेकहीन हो जाने से ये कदम उठाये जा रहे हैं इसका परिणाम क्या हुआ कोई हल न निकल कर खुद अनेक परेशानियों से मुक्त होकर अन्यों को मुसीबत में डाल गए क्या इतनी सोच भी नहीं रही की सीता का अपहरण होने पर राम जी ने हताशा ण्निराशा को अंगीकार न करके मुसीबत का सामना किया ! क्या एक तरफा प्रेम के कारण दबाब में आकर भावावेश में गोली चलाकर मौत को गले लगाया और फिर भरा पूरा परिवार को रोता बिलखता छोड़ गए ण्जैसे फ़िल्मी दुनिया में होता हैं ,वे कल्पना में बताते हैं और हम वास्तविकता में स्वीकारते हैं इससे क्या हुआ घ् इस कारण ये युवा जिससे भविष्य में परिवार ,समाज और देश को बहुत संभावनाएं थी वो खतम हो गयी और फल निष्फल रहा ण्ठीक हैं जोश में होश नहीं रहता पर वास्तविक जीवन कल्पनायुक्त जीवन से अलग होता हैं। आज सरकार भी युग के अनुरूप तकीनीकी से परेशान हैं और समाज भी दुखी होता जा रहा हैं ण्इस पर बहुत गंभीरता से चिंतन मनन की जरुरत हैं ण्इसके अधिकतम दुष्परिणाम सामने आ रहे हैं और हम इसके चंगुल में ऐसे फंस गए हैं जैसे अभिमन्यु चक्रव्यूह में।

पहले कहा जाता था की किसी से आदर्श बदला लेना हो तो उसे चुनाव लड़वा दो,मुकदमा लगा दो ,पुराना कबाड़ खाने से कोई मशीन ,मोटर खरीद दो वह उसी में उलझा रहेगा अब किसी से मानसिक रूप से आदर्श बदला लेना हो तो उसे मोबाइल खरीद कर दे दो वो भी इंटरनेट और ,नरोइड ण्बस वह उसी में उलझा रहेगा ध्यह अफीम से भी बड़ा नशा हैं ण्इसमें व्यक्ति अपनी दुनिया में उलझा रहता हैं और दिन रात बैचैन रहता हैं ण्मैसेज अधिक आये तो परेशान और न आये तो परेशान विज्ञानं वरदान और अभिशाप दोनों हैं उपयोगकर्ता कैसे उपयोग करता हैं यह मीठा ,धीमा जहर हैं इसने हमारा ज्ञान विवेक छीन लिया इसके कारण हम कल्पना लोक में घूमते हैं हमें अभिशाप के दलदल में धकेल दिया। वापिस स्वयं को सोच समझकर आना होगा। इसके आधार पर जीवन और दूभर होगा। यह जहर हैं यह जहर हैं पर मीठा हैं।

डॉ. अरविन्द जैन

(ये लेखक के अपने विचार है)

राजकाज

अमेठी वाला अपनापन संपूर्ण देश से हो

कांग्रेस अध्यक्ष राहुल गांधी अपने संसदीय क्षेत्र अमेठी दो दिन के लिए पहुंचे, तो उन्होंने तमाम अपने लोगों से मुलाकात की। इस दौरान की तस्वीरें देखकर लोगों ने कहा कि वाकई राहुल को अमेठी के लोगों से और अमेठीवासियों को राहुल से प्रेम है। राहुल ने यहां मृतक किसान अब्दुल सत्तार के परिजनों से मुलाकात की और उन्हें ढांढस बंधाया। इस आत्मीयता को देख अब और लोगों ने कहना शुरु कर दिया है कि राहुल को चाहिए कि जिस तरह से वो अमेठी वालों से जुड़ते हैं और अपनापन जाहिर करते हैं देश के अन्य हिस्सों से भी वैसे ही जुड़ें और अपनत्व के साथ प्यार बांटें तो शायद कांग्रेस जमीनी स्तर पर मजबूत हो जाएगी। समीक्षकों की मानें तो पुराने कांग्रेसी जिस तरह से घर.घर में पैठ रखते थे और सभी के सुख.दुख में शरीक होते थे उस परिपाटी को दोबारा शुरु करने की आवश्यकता है, तभी पार्टी का कुछ भला हो सकेगा।

दिल्ली का प्रशासनिक संकट

दिल्ली की केजरीवाल सरकार को भले ही सुप्रीम कोर्ट की संविधान पीठ से राहत मिल गई हो, लेकिन प्रशासनिक संकट अभी भी टला नहीं है। दरअसल मुख्यमंत्री और एलजी के बीच चल रही अधिकारों की जंग पर सुप्रीम कोर्ट ने फैसला देते हुए जनता द्वारा चुनी गई सरकार के अधिकारों को कम नहीं करने की बात कहकर मामले को साफकिया है। बावजूद इसके दिल्ली में प्रशासनिक टकराव खत्म होने के आसार कम ही हैं। चूंकि दिल्ली के सर्विसेज़ विभाग के अफसरों ने पुराने हिसाब के मुताबिक काम करने का फैसला किया है अतः यह माना जा रहा है कि यहां के बॉस तो एलजी ही रहने वाले हैं, क्योंकि यह विभाग पहले एलजी के पास ही था। अब लोग कह रहे हैं कि केजरीवाल सरकार को संविधान पीठ के फैसले के खिलाफ अधिकारियों के जाने का मामला भी अदालत में ले जाना चाहिए, क्योंकि इस तरह से समस्या का समाधान मुमकिन नहीं है।